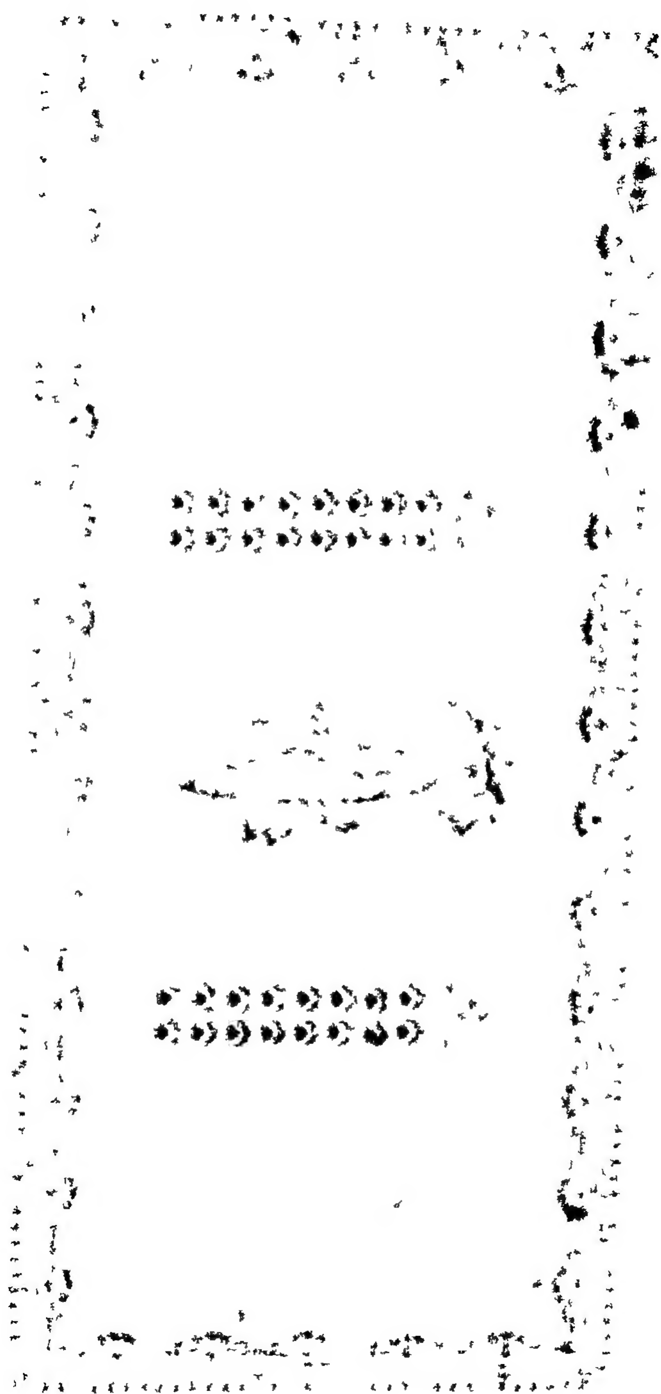
॥ अथ ॥

भाषाटीका संहित महालक्ष्मीव्रतकथा-

प्रारम्भः ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे पुरुषोत्तम ! विचारकर एक ऐसा व्रत बतलाइये कि जिसके करने से अपना नष्ट भया हुवा स्थान (राज्यादि जो छूट गये हों) फिर मिलें और सब ऐश्वर्य, पुत्र, आयु आदि फलोंकी प्राप्ति हो॥१॥श्रीकृष्णजी कहते हैं हे युधिष्ठिर! सत्ययुगके

श्रीगणेशाय नमः ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ स्वस्थानलाभपुत्रायुः सर्वैश्वर्यफलप्रदम् ॥ व्रतमेकं समाख्व विचार्य पुरुषोत्तम ॥ १ ॥ कृष्ण उवाच ॥ दुर्वारे चैव दैत्येन्द्रे परिव्याप्तत्रिविष्टपे ॥ एतदेव कृतस्यादौ देवेन्द्रः प्राह नारदम् ॥ २ ॥ तस्य श्रुत्वा ततो वाक्यं स मुनिः प्रत्यभाषत ॥ नारद उवाच ॥ पुरन्दर पुरं पूर्वं परमासीत्सुशोभितम् ॥ ३ ॥

आरम्भमें दुःखसे वारण करने योग्य ऐसे वृत्रासुरने स्वर्ग जब व्याप्त कर लिया (अर्थात् देवताओंको बहुत त्रास देने लगा)तब यही बात नारदजीसे इन्द्रने भी कही थी॥२॥उस वक्त इन्द्रके वाक्यको सुनकर नारद मुनि बोले–हे पुरन्दर,हे इन्द्र! पहले एक अत्यंत सुन्दर नगर था ॥ ३ ॥

जहांकी जमीन रत्नगर्भा थी, पर्वत रत्नयुक्त थे, जहां स्त्रियोंके कटाक्षरूपी बाणोंसे ॥ ४ ॥ कामदेव त्रैलोक्यको अपने वश करता था ॥ ५ ॥ जहां अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष उत्पन्न होते थे। जो पुर संसार-

रत्नगर्भाऽभवद्भूतमिर्यत्र रत्नाढ्यभूधराः ॥ यत्रांगनाजनापांगभृंगलोचनसायकैः ॥ ४ ॥ त्रैलोक्यं स्ववशं चक्रे देवः कुसुमसायकः ॥ ५ ॥ चतुर्वर्गजनिर्यत्र यच्च विश्वस्य भूषणम् ॥ विश्वकर्मापि यद्वीक्ष्य कंपयत्यनिशं शिरः ॥ ६ ॥ तत्राभवन्महीपालो मंगलो मंगलालयः ॥ चिल्लदेवी प्रिया तस्य दुर्भगैका बभूव ह ॥ अन्या तु चोलदेवी या महीषी सा यशस्विनी ॥ ७ ॥

का आभूषण था, और जिस नगरकी रचना (बनावट) देख, विश्वकर्मा भी हरदम शिर डुलाता था ॥ ६ ॥ वहांका राजा मंगलस्वरूप अतएव मंगल नाम से विख्यात था, उसकी दुष्टभाग्यवाली एक चिल्लदेवी नामकी स्त्री थी और दुसरा महायशस्विनी चोलदेवी थी, वह पटरानी थी ॥ ७ ॥

किसी समय मंगल राजाने चोलदेवीको साथ लेकर राजमहलके ऊपर चढ़ते ही एक जगह देखी ॥ ८ ॥ दन्तकान्तिसे प्रकाशित की हैं दिशा जिसने ऐसा राजा उस जमीनको देखकर कामयुक्त किंचित् हंसमुख होकर चोलदेवीके प्रति बोला ॥ ९ ॥ हे चंचलाक्षि ! अपनी शोभासे नन्दनवनको लजाने-

कदाचिन्मगलो राजा चोलदेवीसहायवान् ॥ प्रासादशिखरारूढः स्थलीमेकामपश्यत ॥ ८ ॥
तामालोक्य महीपालः स्मरस्मेरमुखांबुजः ॥ चोलदेवीं प्रति प्राह दंतद्योतितदिङ्मुखः ॥ ९ ॥
चंचलाक्षि तवोद्यानं कार्तिनिंदितनंदनम् ॥ कारयामि तयोद्दिष्टतस्त्रोद्यानमकारयत् ॥ १० ॥
संपन्नं तु तदुद्यानं नानाद्रुमलतान्वितम् ॥ नानाफलसमायुक्तं नानापक्षिसमावृतम् ॥ ११ ॥

वाला यहां एक तेरा बगीचा लगावेंगे । यह सुन (चोलदेवी) ने कहा कि बहुत अच्छा, लगवाइये । उसके ऐसा कहनेपर राजाने वहांपर बगीचा लगवा दिया ॥ १० ॥ जब वह बगीचा अनेक तरहके वृक्षोंकी लताओंसे युक्त हुआ अच्छी तरह फलने फूलने लगा, और अनेक प्रकारके पक्षियोंसे सेवित अर्थात् (संपूर्ण सामग्रीसे संपन्न हुआ) ॥ ११ ॥

तब वहांपर एक सुवर आया। वह कैसा था कि बड़ा शरीरवाला, ऊँचा मानो आकाश को स्पर्श कर रहा हो और वर्षाकालके मेघोंकी तरह कृष्णवर्ण, चंचल नेत्रवाला ॥१२॥ अपनी डाढ़ोंसे मानो चंद्र-सूर्यको पकड़ रहाहै, प्रलयकालके मेघोंके समान शब्द करनेवाला वह सुवर अनेक प्रकारके वृक्षलतादियों

तत्रागत्य महाक्रोडस्तनुन्यस्तनभस्थलः ॥ प्रावृट्कालघनश्यामश्चक्षुभ्यामतिचंचलः ॥ १२ ॥ दंष्ट्रावकृष्टचंद्रार्कः प्रलयांभोधरध्वनिः ॥ उद्यानं भंजयामास नानाद्रुमलतान्वितम् ॥ १३ ॥ कांश्चिदुत्पाटयामास पादपान्पडुनंदन ॥ कांश्चिद्दंतप्रहारेण कांश्चिद्दंतप्रघर्षणैः ॥ १४ ॥

से युक्त उस बगीचेको तोड़ने लगा ॥ १३ ॥ श्रीकृष्णजी कहते हैं कि हे युधिष्ठिर ! उसने कितने वृक्ष उखाड़ डाले, कितने दांतोंके प्रहारसे फाड़ डाले, कितने दांतों घर्षण से तोड़ डाले ॥ १४ ॥

काल सदृश उस सूकरने बगीचेके कितने रक्षकोंको भी मारा तब बगीचे के रक्षकों ने भयभीत हो, सब मिलकर उसका हाल राजाके सामने कहते भये । राजाने वह सुनके, क्रोधसे लाल लाल नेत्र कर ॥ १५ ॥ १६ ॥ अपनी सारी फौजको हुक्म दिया कि उसको मारो । ऐसा हुक्म दे कर आपभी मत-

जघान कांश्चित्पुरुषान्रक्षकानंतकोपमः ॥ तद्भुनक्तीति विज्ञाय संहत्योद्यानपालकाः ॥ १५ ॥
सभयास्तस्य वृत्तांतमूचुस्ते नृपतेः पुरः ॥ तदाकर्ण्य ततो राजा क्रोधारुणितलोचनः ॥ १६ ॥
वधाय दंष्ट्रिणस्तस्य संदिदेशाखिलं बलम् ॥ ततश्चचाल भूपालः श्रीगंडगलितैर्गजैः ॥ १७ ॥
आप्लावयन्महीं सर्वां वाजिवृंदवृताम्बराम् ॥ चालयन्सकलान् शैलान् स्यन्दनौघमरुद्भवैः ॥ १८ ॥

वारे हाथियों सहित चला ॥१७॥ घोंड़ोके समूह का कपड़ा पहनी हुई अर्थात् (घोड़ों से व्याप्त) पृथ्वी-को खुदाता हुआ और रथोंके प्रवाहके पवनसे पर्वतोंको कँपाता हुआ ॥ १८ ॥

अच्छे २ पैदल सिपाहियोंसे सब दिशाओंको पूरित करता हुआ वह राजा उस बगीचेको खूब मजबूत घेरके॥१६॥अत्यन्त गंभीर शब्दसे दसो दिशाओंको शब्दायमान करता हुआ बडे जोरसे बोला कि जिसकी रास्तासे यह सुवर अन्य वनमें चला जायगा॥२०॥उसका शिर मैं शत्रुके समान जरूर काटूंगा।

पदातिभिर्महोदारैः पूरयन्निखिला दिशः ॥ ततो गाढं समावृत्य तदुद्यानं नरेश्वरः ॥ १६ ॥

उवाचोच्चैरतिध्वानैर्दिशो मुखरयन्दश ॥ पथि यस्य वराहोऽयं प्रयात्युपवनांतरम् ॥ २० ॥

तस्यावश्यं शिरश्छेदं विदधामि रिपोरिव ॥ तस्य भूपस्य तद्वाक्यं समाकर्ण्य स सूकरः ॥ २१ ॥

जगामास्यैव मार्गेण प्राणिनां चेष्टितं यथा ॥ ततः स सूकरासक्तः कशयाऽश्वं प्रताड्य च ॥२२॥

व्रीडाकलंकितस्यैवो मार्गं तस्यैवं सोऽगमत् ॥ गत्वाऽथ विपिनं घोरं सिंहशार्दूलसंकुलम् ॥२३॥

वह सूकर राजाका यह वचन सुनकर॥२१॥जैसे प्राणियोंका चेष्टित हो उसी तरह उस राजाहीके मार्गसे निकल गया। तब सूकरासक्त वह राजाभी लज्जित होकर चाबुकसे घोड़ेको मारकर उस सुवरके पीछे गया। जब महाघोर, सिंहशार्दूलादिकोंसे व्याप्त ॥ २२ ॥ २३ ॥

तमाल, ताल, हिंताल, अर्जुन इन वृक्षोंसे युक्त और झिल्लीझंकारोंसे सब दिशाओंको पूरित करनेवाले ऐसे एक वनमें जाकर ॥२४॥ वहां स्वस्थचित्त हो उसी सूकरको देखता हुआ उस वनमें घूमने लगा। बाद में जब वह सुवर समय पाकर, राजाके सामने हुआ तब राजाने उसे बाणसे मारा। जैसे इन्द्रजी

तमालतालहिंतालशालार्जुनलतान्वितम् ॥ झिल्लीझंकारसंभारवाचाटितदिगंतरम् ॥ २४ ॥
तत्रैकचेताः संपश्यन्वने बभ्राम भूपतिः ॥ कोलो वेलामवाप्याऽथ सोऽभवद्राजसंमुखः ॥ भल्लेन
सोऽवधीत्कोलं वज्रेणाद्रिं यथा हरिः ॥ २५ ॥ अथ व्योम्नि विमानस्थः स्मरसुंदरविग्रहः ॥ क्रो-
डरूपं परित्यज्य सोऽब्रवीन्मंगलं नृपम् ॥ २६ ॥

वज्रसे पर्वतको मारे ॥ २५ ॥ बादमें वह सूकररूप छोड़, आकाशमें कामतुल्य सुन्दरशरीर हो, विमान मे बैठ मंगल नाम राजासे बोला ॥ २६ ॥

हे महीपाल ! आपका कल्याण हो । आपने हमको मुक्त किया अर्थात् सूकरयोनिसे छुड़ाया । अब मैं जिसकारणसे सूकर हुआ वह हाल सुनिये ॥ २७ ॥ मेरा नाम चित्ररथ है मैं एक समय देवताओं से युक्त ब्रह्मदेवके निकट चंचत्पुट आदि तालोंकरके और षड्ज आदि सातों स्वरों (निषाद, ऋषभ,

गंधर्व उवाच ॥ स्वस्ति तेऽस्तु महीपाल त्वया मुक्तिः कृता मम ॥ ममाकर्णय वृत्तान्तं येनाऽहं जात ईदृशः ॥ २७ ॥ एकदा देवतावृंदः संवृताः कमलासनः ॥ चंचत्पुटादिभिस्तालैः षड्जाद्यैः सप्तभिः स्वरैः ॥२८॥ मंद्रादिभिस्त्रिभिर्मानैर्गीयमानं मया नृप ॥ नानास्थानगुणोपेतमश्रौषीद्गीतमुत्तमम् ॥ २९ ॥ गीयमानश्च्युतः स्थानात्ततोऽहं कर्मणाऽमुना ॥ शप्तश्चित्ररथस्तेन ब्रह्मणा सृष्टिकर्मणा ॥ ३० ॥

गांधार, षड्ज, मध्यम, धैवत, पंचम,) करके ॥ २८॥ और मंद्रादि तीनों मानों करके अनेक स्थानगुणोंसे युक्त ऐसा उत्तम गीता गाता था ॥ २९ ॥ गाते गाते मैं स्थानसे च्युत हुआ अर्थात् ताल बिगड़ गई । इसी कर्म से सृष्टिकर्ता ब्रह्माजीने मुझको शाप दिया ॥ ३० ॥

कि तुम पृथ्वीपर सूकर होकर रहोगे और जब संपूर्ण शत्रुओं को जितनेवाला मंगलनामका राजा तु-
झको मारेगा तब तेरी मुक्ति होगी ॥ ३१ ॥ सो हे महीपते ! आपके प्रसादसे इस समय वह सब घ-
टित हुआ । इससे हे राजन् ! देवकोभी दुर्लभ ऐसा मेरा वर ग्रहण करो ॥ ३२ ॥ देखो, महालक्ष्मी-

॥ ब्रह्मोवाच ॥ कोलो भव त्वं मेदिन्यां मुक्तिस्ते तु तदा भवेत् ॥ निर्जिताखिलभूपालो मं-
गलस्त्वां हनिष्यति ॥ ३१ ॥ तदद्य घटितं सर्वं त्वत्प्रसादान्महीपते ॥ मद्गृहाण वरं
भूप देवस्यापि सुदुर्लभम् ॥ ३२ ॥ महालक्ष्मीव्रतं दिव्यं चतुर्वर्गफलप्रदम् ॥ लभस्व सार्वभौम-
त्वं गच्छ राज्यं निजं द्रुतम् ॥ ३३ ॥

का व्रत बहुत उत्तम है, और चतुर्वर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) फलको देनेवाला है । आप सार्वभौम राजा
होवोगे । अब शीघ्र आप अपनी राजधानीको जाइये ॥ ३३ ॥

॥ नारद उवाच ॥ चित्ररथोऽथ गंधर्व उक्त्वेदं भूपतिं प्रति ॥ अंतर्धानं गतस्तुष्टः शरत्काल इवां-
बुदः ॥ ३४ ॥ अथ मंगलभूपालः पार्श्वस्थं द्विजमागतम् ॥ विलोक्य वटुकं कश्चित्कक्षानि-
क्षिप्तशंवलम् ॥ ३५ ॥ उवाच मधुरां वाचं स्मितपूर्वां शुचिस्मिताम् ॥ देवस्त्वं दानवस्त्वं वा
गंधर्वो वाऽथ राक्षसः ॥ ३६ ॥ सत्यं वद वटो कस्मात्किमर्थं त्वमिहागतः ॥ श्रुत्वेत्याशिष्य तं
विप्रः प्राह त्वद्देशसंभवः ॥ ३७ ॥

नारदजी कहते हैं–हे इन्द्र इस प्रकार चित्ररथ गन्धर्व राजाके प्रति कहके प्रसन्न हो, शरत्कालके मेघों के समान अन्तर्धान हो गया॥३४॥इसके अनन्तर मंगल राजा कांखमें मृगछाला लिये, बाजूमें खड़े, आये हुए कोई ब्राह्मण ब्रह्मचारीको देख ॥ ३५ ॥ मुसकाके मधुर वाणी बोला कि तुम देव ? या दानव ? या गन्धर्व ? या राक्षस हो?॥३६॥ हे बटो (ब्रह्मचारिन्) सत्य कहो कहां से और किस वास्ते तुम यहां आये हो ? इस प्रकार राजाका वचन सुन ब्रह्मचारीने आशीर्वाद देकर कहा कि मैं तुम्हारे ही देशमें उत्पन्न हूं ॥ ३७ ॥

और मैं आपके साथही आया हूं इससे हमको कुछ यथोचित आज्ञा दीजिये। इसके अनन्तर राजाने कहा कि तेरा नूतन नाम है ॥ ३८ ॥ सो तुम जल्दी जलाशय देख, हमारे वास्ते जल लावो। इसके बाद राजाको वटके नीचे बैठाकर महाबुद्धिमान् वह वटु "ऐसाही करेंगे" यह कह घोड़ेपर चढ पक्षि-योंके शब्दोंसे सुन्दर जहां तालाब था, वहां गया ॥ ३९ ॥ ४० ॥ कैसा है तालाब कि मानों मूर्ति-

अहं सार्द्धं त्वयाऽऽयातस्तदादिश यथोचितम् ॥ राजाऽथ तमुवाचेदं त्वं बटो नूतनाह्वयः ॥ ३८ ॥
अपां स्थानं विलोक्य त्वं तोयं तूर्णं ममानय ॥ अथ विश्रम्य भूपालं बटुको वटपादपे ॥३९॥
तथाकृत्य तुरंगं च समारुह्य महामतिः ॥ जगाम पक्षिघोषेण यत्रास्ते सुंदरं सरः ॥४०॥कमलै-
कनिवासेन रथांगाभरणेन च। वनमालालयत्वेन दधन्नारायणीं तनुम् ॥ ४१ ॥

मान् नारायणही है नारायण कमला जो लक्ष्मीजी हैं, तिनका एक निवासस्थान है। और यहां कमलों-मेंहि लक्ष्मी वसती हैं। और वे चक्रधर हैं तो यहांभी चक्रकी जगह चक्रवाक पक्षीही हैं और वे वन-माला पहने हैं तो यह वनोंकीही माला [पंक्तियों] से शोभित है ॥ ४१ ॥

और कैसा है कि समुद्रसे अधिक है। क्योंकि समुद्रमें पवनका तूफान होता है और इसमें पवनक सैकडों उद्योग विफल जाते हैं, वह खारा है यह मीठा है, वहविषसहित है यह विषरहित है, वह अगस्त्यमुनिकी प्यास न बुझा सका और इसने उनकीभी प्यास बुझा दी है, और वह मलिन

भग्नवायुशतोद्योगसञ्चारं विषवर्जितम् ॥ नाशितागस्तितृष्णार्तं प्रसन्नं सागराधिकम् ॥ ४२॥
पङ्के मग्नोऽथ तत्राश्वः पृष्ठादुत्तीर्य तस्य सः ॥ चतुर्दिशं निरीक्ष्याऽथ तस्यैव सरसस्तटे॥४३॥
दिव्यवस्त्रपरीधानं दिव्याभरणभूषितम् ॥ कथयन्तं कथा दिव्याः स्त्रीणां सार्थमपश्यत ॥ ४४ ॥

है यह निर्मल है॥४२॥इस प्रकारकी शोभा देखता हुवा घुम रहा था इतनेमें उसका घोडा कीचडमें फँस गया, तब उसने उसकी पीठसे उतर चारों दिशाओंको देख उसी तालावके तटमें॥४३॥ दिव्य वस्त्रोंको धारण किये, दिव्य आभरणोंसे भूषित, सुंदर कथाओंको कहता हुआ स्त्रियोंका समूह देखा ॥ ४४ ॥

फिर वह बटु स्त्रियोंके समूहके पास जा अपना हाल कह, हाथ जोड़, मधुर वाणीसे बोला ॥ ४५ ॥ हे सार्थ (स्त्रियोंके समूह) ! श्रद्धा भक्तियुक्त तुम लोग यह क्या कर रही हो इसकी क्या विधि है ? क्या फल है ? सो हमसे यथायोग्य कहिये ॥ ४६ ॥ ऐसा उस बटु (ब्रह्मचारी) का

उपसृत्याऽथ तं सार्थं स्ववृत्तान्तं निवेद्य च ॥ कृतांजलिरिति प्राह बटुर्मधुरया गिरा ॥ ४५ ॥ बटुरुवाच ॥ एतत्किं क्रियते सार्थ त्वया भक्तिपरेण वै ॥ को विधिः किं फलं चाऽस्य ब्रूहि तन्मे याथतथम् ॥ ४६ ॥ श्रुत्वा च तमुवाचेदं सार्थः करुणया गिरा ॥ सार्थ उवाच ॥ शृणु विप्रैकचित्तेन श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ॥ ४७ ॥

वचन सुन, स्त्रियोंका समूह दयायुक्त वाणीसे बोला, हे विप्र ! एकचित्त, श्रद्धा व भक्तियुक्त हो सुनो ॥ ४७ ॥

संपूर्ण फलोंको देनेवाला यह व्रत उन्हीं महालक्ष्मीजीका है। जो तीनों लोकोंमें माया, प्रकृति, शक्ति आदिनामोंसे पुकारी जाती हैं ॥४८॥ हे बटो [ब्रह्मचारिन्]! इसकी विधि को सुनो। भाद्रपद महीनेकी शुक्लाऽष्टमीसें इस व्रतका आरंभ किया जाता है ॥४९॥ सवेरे उठके सोलह बार हाथ, पांव, मुख धोके,

या माया प्रकृतिः शक्तिस्त्रैलोक्येऽप्यभिधीयते ॥ व्रतमेतन्महालक्ष्म्यास्तस्मात् सर्वफलप्रदम् ॥ ४८ ॥ आकर्णय विधिं चास्य कथ्यमानं मया बटो ॥ भाद्रे मासि सिताष्टम्यामारम्भोऽस्य विधीयते ॥ ४९ ॥ प्रातः षोडशकृत्वस्तु प्रक्षाल्यांघ्री करौ मुखम् ॥ तन्तुषोडशसंसिद्धं ग्रन्थि षोडशसंयुतम् ॥ ५० ॥ मालतीपुष्पकर्पूरचन्दनागुरुचर्चितम् ॥ लक्ष्म्यै नमोऽथ मंत्रेण प्रति ग्रन्थ्यभिमंत्रितम् ॥ ५१ ॥

सोलह तागोंसे बनाया हुआ, सोलह गांठियोंसे युक्त, मालतीफूल, कपूर, चन्दन, अगर इनसे पूजित और "लक्ष्म्यैनमः" इस मंत्रसे प्रति गांठमें अभिमन्त्रित, ऐसा डोरा ॥ ५० ॥ ५१ ॥

हे महालक्ष्मी! धन धान्य, पृथ्वी, धर्म कीर्ति, आयु, यश शोभा, घोड़ा, हाथी, पुत्र, हमको देओ ॥ ५२ ॥ इस मंत्रसे दहिने हाथमें बाँधकर, अक्षतासहित दूबके सोलह पौधा लेकर ॥ ५३ ॥

धनं धान्यं धरां धर्मं कीर्तिमायुर्यशः श्रियम् ॥ तुरंगान्दन्तिनः पुत्रान्महालक्ष्मि प्रयच्छ मे ॥ ५८ ॥ मन्त्रेणानेन बद्ध्वाथ दोरकं दक्षिणे करे ॥ कांडानि षोडशादाय दूर्वाया साक्षतानि च ॥ ५३ ॥ एकचित्तः कथां श्रुत्वा पूजयेत्तत्र दोरकम् ॥ ततस्तु प्रातरारभ्य यावत्स्यद-सिताष्टमी ॥ ५४ ॥ तावत्प्रक्षाल्य हस्तौ तु पादादीनि कथां तथा ॥ शृणुयात्प्रत्यहं विप्र तत्संख्यैरक्षतादिभिः ॥ ५५ ॥

एकचित्त हो, कथा सुने, उन्हींसे डोरा पूजे फिर प्रातःकालसे लेकर कृष्णपक्षकी अष्टमी तक ॥ ५४ ॥ रोज हाथ, पांव मुह आदि धोकर वैसेही अक्षतादि लेकर कथा सुने ॥ ५५ ॥

तदनन्तर कृष्णपक्षकी अष्टमीको सायंकालमें जितेन्द्रिय हो स्नान कर, श्वेत वस्त्र परिधान करके व्रत करनेवाला पुरुष हो या स्त्री पूजास्थानको जायें ॥५६॥वहां पर पूर्वाभिमुख होकर, सुन्दर धोये हुए आसनपर बैठकर उत्तम, सफेद पत्तोंसे युक्त अष्टदल कमल लिखे ॥ ५७ ॥ बाजू में ऐन्द्री आदि

अथ कृष्णाष्टमीं प्राप्य नक्तकाले जितेन्द्रिय॥स्नातः शुक्लाम्बरधरो। व्रती पूजागृहं विशेत्॥ ५६ ॥
तत्रो पविश्य पूर्वास्यश्चारुधौतासनोपरि ॥ श्वेपत्रं लिखेदष्टदलं कमलमुत्तमम्॥ ५७ ॥ ऐन्द्या-
दिशक्तिसंयुक्तं पार्श्वे पत्रं सकेसरम् ॥ कर्णिकायां ततो लक्ष्मीं कर्पूरक्षोदपांडुराम् ॥ ५८ ॥
शुभ्रवस्त्रपरीधानां मुक्ताभरणभूषिताम् ॥ पंकजासनसंस्थानां स्मेराननसरोरुहाम् ॥ ५९ ॥

शक्तियोंसे युक्त केसर सहित पत्र लिखे फिर कपूर, अगर चन्दन आदिसे कर्णिकामें देवी लक्ष्मीजीको लिखकर ध्यान करके कपूरकी तरह सफेद, सुन्दर वस्त्रोंको धारण किये, मुक्ताभरणोंसे भूषित

कमल के आसनमें बैठी हुई किंचित् हास्ययुक्त है मुखकमल जिसका ऐसी शरत्कालीन चन्द्रके तुल्य कांतिवाली, सुन्दर नेत्रवाली, चार भुजा वाली दोनों हाथमें हैं कमल जिसके ऐसी कमलको फिराती

शारदेंदुकलाकान्तिं स्निग्धनेत्रां चतुर्भुजाम् ॥ पद्मयुग्मामभयदां वरव्यग्रकराम्बुजाम् ॥ ६० ॥
अभितो गजयुग्मेन सिच्यमानां कराम्बुना ॥ संचिन्त्यैवं लिखेद्देवीं कर्पूरागुरुचन्दनैः ॥ ६१ ॥
ततस्त्वावाहनं कुर्यान्मंत्रेणानेन सुव्रती ॥ ६२ ॥ महालक्ष्मि समागच्छ पद्मनाभपदादिह ॥
पंचोपचारपूजेयं त्वदर्थं देवि कल्पिता ॥ ६३ ॥

हुई दोनों तरफ दो हाथियोंके शुंडादण्डोंसे सिच्यमान इस तरह लक्ष्मीजीके स्वरूपका ध्यान करके ॥५८॥ ५९॥६०॥६१॥ फिर सुन्दर व्रती इस आगे कहे हुए मंत्रसे आवाहन करे ॥६२॥ हे महालक्ष्मि ! हे देवी ! भगवान्के स्थानसे तुम यहां आवो, तुम्हारें वास्ते मैंने यह पञ्चोपचारकल्पिता पूजा रची है ॥ ६३ ॥

फिर व्रती सोलह दिन पूरे होनेपर उद्यापन करे, स्त्रियोंका समूह ब्राह्मणसे कहता है कि हे विप्र! जिस विधिसे उद्यापन करना चाहिये व श्रद्धाभक्ति युक्तहोकर सुनो॥६४॥ उद्यापनमें सुवर्णके शृँगादिकोंसे युक्त ऐसी एक गऊ, तथा सुवर्ण, अन्न वस्त्रादि वेदपाठी ब्राह्मणको देना चाहिये ॥ ६५ ॥ यथाशक्ति

षोडशाहे तु संपूर्णे कुर्यादुद्यापनं व्रती ॥ विधिना येन विप्रेन्द्र शृणु श्रद्धासमन्वितः ॥ ६४ ॥
दातव्या धेनुरेका वै स्वर्णशृंगादिसंयुता। । श्रोत्रियाय सुवर्णं च तथान्नवसनादिकम् ॥ ६५ ॥
यथाशक्ति सुवर्णं च दत्त्वा पूर्णं भवेद्व्रतम् ॥ द्विजेभ्यः षोडशेभ्यश्च प्रदद्याद्वसनादिकम् ॥६६॥सार्थ
उवाच॥एतत्ते कथितं विप्र व्रतानामुत्तमं व्रतम्॥ यद्विधानादनायासाल्लभते वाञ्छितं फलम् ॥६७॥

सुवर्ण देकर सोलह ब्राह्मणोंको अन्न, वस्त्रादि देने से व्रत पूर्ण होता है ॥ ६६ ॥ देवियोंके समूहने कहा कि हे विप्र ! व्रतोंमें उत्तम यह व्रत हमने तुमसे कहा, जिसके करनेसे अनायास वाञ्छित फल प्राप्त होता है ॥ ६७ ॥

हे विप्र ! इस व्रतको करके अपने राजासेभी कराओ, यह उत्तम व्रत श्रद्धावान्को देना॥६८॥नास्तिकों के आगे इस व्रतको कभी प्रकाशित न करना। इसके बाद ब्राह्मणने उस स्त्री समूहको नमस्कार करके कीचड़से घोड़ेको निकाल ॥ ६९ ॥ जल पिलाके राजाके निमित्त कमलके पत्तोंमें जल लेकर

कृत्वा व्रतं पर विप्र राजानं तच्च कारय ॥ व्रतमेतत्त्वया विप्र देयं श्रद्धावते परम्॥ ६८ ॥ नास्तिकानां पुरस्तात्तु न प्रकाश्यं कथञ्चन ॥ नमस्कृत्य तु तं सार्थं पङ्कादुद्धृत्य वाजिनम् ॥ ६९ ॥ सम्पीयाम्भस्तदादाय पद्मिनीपत्रयन्त्रितम् ॥ आरुह्य तुरगं विप्रो राजान्तिकमुपागतः ॥ ७० ॥ निवेद्य तद्व्रतं विप्र राजानं समकारयत् ॥ नानाप्रकारसंभारसाकुलं वटुकस्य च ॥ ७१ ॥

घोड़ेपर चढ़के राजाके पास पहुंचा ॥ ७० ॥ उस व्रतका वृत्तांत कहकर नानाप्रकारकी सामग्रीसे युक्त होकर राजासे व्रत कराया॥

उस व्रतके प्रभावसे राजा सब राजाओंमें श्रेष्ठ राजा हुआ। तत्पश्चात् राजा पटुके लाये हुए घोड़ेपर चढ़कर ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ उस व्रतके प्रभावसे शीघ्रही अपने पुरको आया । और उस पृथ्वीके इन्द्र राजाको आते देखकर ॥७३॥ बाजे आदिसे सम्पूर्ण पुरवासी उत्सव करते भये । चलायमान पताकोंकी

व्रतप्रभावादभवत्स भूभृद्भूभृतां वरः ॥ अथारुह्य महीपालो वटुपर्य्याणितं हयम् ॥ ७२ ॥ तद्व्रतस्य प्रभावेण तूर्णं स्वपुरमागतः ॥ तमायान्तं समालोक्य राजानं भूपुरन्दरम् ॥ ७३ ॥ उत्सवं चक्रिरे पौरास्तौर्यादिकपुरस्सरम् ॥ चलत्पताकदोमालं लसत्कलशमौलिकम् ॥ ७४ ॥ पुरं नृत्यदिवाभाति च्छन्नं घण्टौघघर्घरैः ॥ अथोत्कलिकया काचिद्धावति स्म वराङ्गना ॥ ७५ ॥

पाँति और कलशोंके मुकुटसे शोभित ॥ ७४ ॥ घण्टोंके समूहके घर्घरशब्दसे नाचता हुआसा शहर मालूम होता था, कोई स्त्री उत्कंठासे इधर उधर दड़ती थी ॥ ७५ ॥

कोई चलायमान मोतिके लताजालोंसे चार भाग करती थी और कोई स्त्री बालोंको छोरे, कोई एकही आंखमें अंजन दिये थी ॥ ७६ ॥ कोई नितम्बके भारसे दुःखी और कोई मोटे स्तनकी थी। तदनन्तर बटुसहित राजा अपने गृहमें प्रवेश करने लगा ॥ ७७ ॥ तब पुरकी स्त्रियोंकरके फेंके हुए

चलन्मुक्तालताजालैश्चतुष्कमिव कुर्वती ॥ काचिद्विमुक्तकेशेव कृतैकनयनाञ्जना ॥ ७६ ॥ काचिन्नितम्बभारार्ता काचित्पीनपयोधरा ॥ अथाऽविशन्महीपालो बटुना सहितो गृहम् ॥ ७७ ॥ पौरनारीजनाक्षिप्तलाजैः पूरितविग्रहः ॥ अथोत्तीर्य हयात्तस्माद्बटुबाहुवलम्बितः ॥ ७८ ॥ जगाम मङ्गलो राजा चोलदेवी तु यत्र वै ॥ दृष्ट्वा तु चोलदेवी सा दोरकं राजबाहुके ॥ ७९ ॥

लाजासे ढकी है देह जिसकी ऐसा राजा बटुका हाथ पकडके घडेसे उतरा ॥ ७८ जहां चोलदेवी नाम रानी रहती थी, वहां मंगलनाम राजा गया और चोलदेवीने राजाको बाहुमें डोरेको देखा॥७९॥

मनमें यह विचारके कोपित हो राजामें यह शङ्का करती भयी कि, राजा शिकारके बहानेसे किसी और स्त्रीके पास गये हैं ॥ ८० ॥ उसने अपने सौभाग्यके लिये राजाकी बाहुमें डोरा बांध दिया है। और इसी तरह मेरे देखनेके लिये इस बटुको भेजा है॥८१॥ तत्पश्चात् कुपित है दैव जिसपर ऐसी उस

विमृश्य मनसा क्रुद्धा शङ्काङ्के नृपे त्विमाम् ॥ आखेटकस्य व्याजेन गतोऽन्यां वल्लभां प्रति
॥ ८० ॥ सौभाग्याय तया बद्धो दोरको भूभुजो भुजे ॥ तथैव बटुकश्चायं द्रष्टुं मां प्रेषितो ध्रुवम्
॥ ८१ ॥ ततो दुर्दैवदुष्टात्मा कोपादाच्छिद्य दोरकम् ॥ चिक्षेप च महीपृष्ठे स्वसौभाग्यसुखैस्सह
॥८२॥न बुबोध च तां राजा त्रोटयंतीञ्च दोरकम् ॥ सामन्तमंत्रिभृत्याद्यैः कुर्वन्वार्तां वनोद्भवाम् ८३

दुष्टात्माने कोपसे डोरेको तोड अपने सौभाग्यसुखके साथ पृथ्वीमें फेंक दिया॥८२॥ सामन्त, मंत्री, भृत्यादिकों सहित वनकी वार्ता करता हुआ राजारानी डोरे को तोड़ रही है इस बात को नहीं जान सका॥८३॥

उसी समय चिल्लदेवी रानीकी कोई दासी देखनेको आई और उस टूटे हुए डोरेको लेकर उसका व्रत बटुकसे पूछकर ॥ ८४ ॥ उस दासीने अपनी रानीसे उसव्रत को करने केलिये कहा। तत्पश्चात् चिल्लदेवी नूतन नाम बटुको बुलाकर उस व्रतको करती भयी ॥ ८५ ॥ तत्पश्चात् वर्षके बीतनेपर लक्ष्मीपूजाके दिन चिल्लदेवी रानीके गृहमें बाजा,नाच, गाना आदिके शब्दोंको राजाने सुना ॥ ८६ ॥ उस शब्दको सुनकर राजाने नूतन नाम बटुसे कहा, अहह ? आज लक्ष्मीके पूजनका दिन है। वह मेरा व्रतका डोरा कहां है ! ॥ ८७ ॥

चिल्लदेव्यास्तदा काचिद्दासी द्रष्टुं समागता ॥ तया दोरकमादाय बटुमापृच्छय तद्व्रतम् ॥८५॥
तद्व्रतस्य विधानार्थं स्वस्वामिन्यै निवेदितम् ॥ ततो नूतनमाहूय चिल्लदेव्यकरोद्व्रतम् ॥ ८६ ॥
अथ संवत्सरेऽतीते लक्ष्मीपूजादिने नृपः ॥ तौर्य्यत्रिकस्य निःस्वानं चिल्लदेव्या गृहेऽशृणोत् ८६॥
तदाकर्ण्य महीपालो नूतनम्बटुमब्रवीत् ॥ अहहाद्य दिनं लक्ष्म्यास्स्व व्रतस्य क दोरकः ॥ ८७ ॥

इसप्रकार राजाके पूछने पर वटुने डोरेके तोड़नेकी बात कही।उसको सुनके मंगलनाम राजा चोलदेवीपर नाराज हो ॥ ८८ ॥ कहने लगा कि आज हम चिल्लदेवी रानीके घरमें पूजा करेंगे तत्पश्चात् नूतनके हाथको पकडके मंगल नाम राजा ॥ ८ ॥ लक्ष्मीजीके पूजनके लिये चिल्लदेवीके गृहको गये । लक्ष्मीजी

इति पृष्टो नृपं प्राह दोरकत्रोटनक्रमम् ॥ तच्छ्रुत्व मंगलो राजा चोलदेव्यै प्रकुप्य च ॥ ८८ ॥ मयाऽद्य पूजनं कार्यं चिल्लदेवीगृहं प्रति ॥ अथ मंगलाभूपालो बटुबाहवलम्बितः ॥८६॥ चचाल कमलार्चार्थे चिल्लदेवीगृहं प्रति ॥ अत्रान्तरे महालक्ष्मीर्वृद्धरूपं विधाय च ॥॥९० ॥ जिज्ञासार्थं गृहं तस्याश्चोलदेव्यास्ततो गता ॥ गच्छ गच्छादिदुष्टे त्वं किं गृहागमनेन च ॥ ९१ ॥

वृद्धा स्त्रीका रूप धारणकर ॥ ९० ॥ परीक्षा लेने के लिये चोलदेवीके गृहमें आई । उसको देखकर रानीने कहा कि हे दुष्टे ! तू यहांसे चली जा; मेरे यहां आनेसे क्या है ? ॥ ९१ ॥

इस प्रकार उस दुष्टा रानी से अत्यंत अपमानित होकर लक्ष्मीजी क्रोध करके चोलदेवीसे बोलीं ॥६२॥ कि जो तैंने मेरा अनादर किया है,उससे तू शूकरमुखी हो, इस प्रकार रानीको शाप दिया तभीसे पृथ्वी में वह मंगलपुर कोल्हापुर नामसे प्रसिद्ध हुआ ॥६३॥६४॥ तत्पश्चात् रानीके स्तुति करनेपर महालक्ष्मीजी

तया दुराशयात्यर्थं लक्ष्मीः साऽप्यवमानिता ॥ ततः क्रुद्धा महालक्ष्मीश्चोलदेवीमभाषत ॥ ६२ ॥ शशापाऽथो महालक्ष्मीश्चोलदेवीं पुनः पुनः ॥ ६३ ॥ लक्ष्मीरुवाच ॥ कोलास्या भव दुष्टे त्वं यत्त्वया ह्यवमानिता ॥ कोलापुरमिति ख्यातं क्षितौ तन्मंगलं पुरम्॥ ६४ ॥अथाऽऽयाता महालक्ष्मीश्चिल्लदेवीनिकेतनम् ॥ बहुधा चिल्लदेव्या सा लक्ष्मीस्सम्मानिताऽर्चिता ॥ ६५ ॥

उसी रूपसे चिल्लदेवीके गृहमें आई, तब चिल्लदेवीने बहुत प्रकारसे मानपूर्वक महालक्ष्मीजीकी पूजा की ॥ ६५ ॥

तब लक्ष्मीजी वृद्धरूपको छोड़कर प्रत्यक्ष हुईं और रानीने पञ्चोपचारपूजासे लक्ष्मीजीकी पूजा की ॥९६॥ तत्पश्चात् लक्ष्मीजी प्रसन्न होकर चिल्लदेवीसे बोलीं ॥ ९७ ॥ कि हे चिल्लदेवी ! तुम्हारे पूजनसे हम प्रसन्न हैं । वर मांगो । तदनंतर शुभ है चित्त जिसका ॥ ९८ ॥ ऐसी चिल्लदेवीने महालक्ष्मीसे यह

वृद्धरूपं परित्यज्य प्रत्यक्षा साऽभवत्तदा ॥ पञ्चोपचारपूजाभिः श्रियं राज्ञी ततोऽर्चयत् ॥ ९५ ॥ अतितुष्टा ततोलक्ष्मीश्चिल्लदेवीमुवाच ह ॥ ९७ ॥ श्रीरुवाच ॥ अर्चनात्ते प्रसन्नाऽस्मि चिल्लदेवी वरं वृणु ॥ वव्रे वरं ततो राज्ञी चिल्लदेवी शुभाशया ॥ ९८ ॥ चिल्लदेव्युवाच ॥ ये करिष्यंति ते देवि व्रतमेतत्सुरेश्वरि ॥ तद्वेश्म न त्वया त्याज्यं यावच्चन्द्रदिवाकरौ ॥ ९९ ॥ अद्याऽऽरभ्य कथा ह्येषा भूपसंबंधिनी तु सा ॥ ख्यातिं याति क्षितौ देवि भक्तिर्भवतु मे त्वयि ॥ १०० ॥

वर मांगा कि हे देवि ! जो कोई इस व्रतको करै, हे सुरेश्वरि ! उसके घरको जबतक सूर्य चंद्रमा रहें तबतक न छोड़ो ॥ ९९ ॥ और आजसे यह राजसंबन्धी कथा संसारमें विख्यात हो और तुम्हारे विषयमें हमारी भक्ति हो ॥ १०० ॥

और जो कोई सद्भावसे इस कथाको पढेंगे या सुनेंगे, उनको वांछित फल तुम दो ॥१०१॥ महालक्ष्मीजी तथास्तु कहकर वहीं अन्तर्द्धान हो गईं, तत्पश्चात् मंगलनाम राजा वहां आकर लक्ष्मीजीका पूजन

सद्भावेन कथामेतां ये शृण्वंति पठंति च ॥ तेषां हि वांछितं सर्वं त्वया देयं सदैव हि ॥ १०१ ॥
तथेत्युक्त्वा महालक्ष्मीस्तत्रैवांतरधीयत ॥ अथ मंगलभूपालस्तत्रागत्य श्रियोऽर्चनम् ॥ १०२ ॥
चक्रे परया भक्त्या चिल्लदेव्या समन्वितः ॥ अथेर्ष्यया दुराचारा चिल्लदेवीगृहम्प्रति ॥ १०३ ॥
चोलदेवी समायाता द्वारस्थैर्वारिता जनैः ॥ ततो जगाम विपिनं यत्राऽऽसीदङ्गिरा मुनिः ॥१०४॥

॥ १०२ ॥ परमभक्तिसे चिल्लदेवी रानीसहित करते भये, तदनंतर ईर्षासे दुष्ट आचार करनेवाली चोलदेवीको चिल्लदेवीके गृहमें आती हुई देखि द्वारपालोंने रोका तब वह जहां अंगिराऋषि रहते थे उस वनको गई ॥ १०३ ॥ १०४ ॥

उन्होंने उसको शूकरमुखी देखकर ज्ञानदृष्टिसे विचार, अंगिरा मुनिने उस चोलदेवीसे लक्ष्मीजीका व्रत कराया ॥ १०५ ॥ व्रतके करनेसे चोलदेवी महायशस्विनी हुई और चतुरता, केली, लीला और

अथाऽऽलोक्याद्भुताकारां ज्ञानदृष्ट्या विचिन्त्य ताम् ॥ स मुनिः श्रीव्रतं दिव्यं चोलदेवीमकारयत् ॥१०५॥ व्रते कृतेऽथ संजाता चोलदेवी महायशाः ॥ दाक्षिण्यकेलिलीलाभिर्लावण्यैकनिकेतना ॥ १०६ ॥ ततः कदाचिदागत्य वनमाखेटके नृपः ॥ मुनेर्वेश्मनि राजा तां ददर्श वामलोचनाम् ॥ १०७ ॥ अथ राजा मुनिम्प्राह केयं धन्येति कथ्यताम् ॥ तद्वृत्तान्तं समाख्याय राज्ञे तां प्रददौ मुनिः ॥ १०८ ॥

शोभाका गृह हुई ॥ १०६ ॥ तत्पश्चात् किसी समयमें मंगलनाम राजा शिकार खेलनेको वनमें आया और उस स्त्रीको ऋषिके गृहमें देखा, तब राजाने मुनिसे पूछा कि यह स्त्री कौन है ? उसका सम्पूर्ण वृत्तांत कहकर उस रानीको मुनिने राजाको दिया ॥ १०७ ॥ १०८ ॥

इसके अनन्तर राजा अपने राज्यमें आकर चोलदेवी और चिल्लदेवीसहित मंगल राजा राज्य करने लगा ॥ १०६ ॥ फिर चिल्लदेवीने चोलदेवीसे मिलनेके हेतु वर मांगा, जिस प्रकार समुद्रमें गंगा यमुना हमेशः मिली रहती हैं॥११०॥उसीप्रकार मंगलराजाकी वे स्त्रियां होती भइ और परस्पर एक से एक अ-

अथागत्य निज राज्यं चोलदेवीसमन्वितः ॥ चिल्लदेव्या च सहितो बुभुजे मंगलो नृपः ॥१०६॥ तथा चिल्लदेवी वरं वव्रे चोलदेवीसमागमम् ॥ समुद्रस्य यथा गङ्गायमुने सङ्गते सदा॥ ११० ॥ तथा मङ्गलभूपस्य जाते ते वामलोचने ॥ परस्पराधिके ते तु प्रिये राज्ञो बभूवतुः ॥१११॥ चिल्लदेव्या समं सोऽथ चोलदेव्या सहाखिलाम् ॥ सप्तद्वीपवतीं पृथ्वीं बुभुजे मंगलो नृपः ॥ ११२ ॥

धिक प्रेम करनेवाली राजाको प्रिय होती भई॥१११॥अनंतर मंगलनाम राजा चिल्लदेवी तथा चोलदेवी सहित सम्पूर्ण सप्तद्वीपवती पृथ्वीका उपभोग करता भया ॥ ११२ ॥

नारदजी इन्द्र से कहते हैं, कि जैसे आपके गुरु मंत्री हैं उसी तरह इस व्रतके प्रभावसे वह नूतन बटु मंगलराजाका मंत्री हुआ, ॥ ११३ ॥ सब राजा में श्रेष्ठ मंगलनाम राजा सम्पूर्ण भोगोंको भोग करके स्वर्गमें प्राप्त हो श्रवणनक्षत्र हुआ ॥ ११४ ॥ नारदजीने कहा कि हे इंद्र। यह व्रत सब व्रतोंमें उत्तम

व्रतस्याऽस्य च सामर्थ्याद्बटुकस्सोऽपि नूतनः ॥ अभून्मंगलभूपस्य मंत्री तव यथा गुरुः ॥११३॥ भुक्त्वाऽथ सकलान्भोगान्मङ्गलो भूभुजां वरः ॥स पुनः स्वर्गमेत्याभून्नक्षत्रं विष्णुदेवतम् ॥११४॥ ॥ नारद उवाच ॥ एतत्ते कथितं शक्र व्रतानामुत्तमं व्रतम् ॥ यत्कथाश्रवणेनाऽपि लभते वांछितं फलम् ॥ ११५ ॥ प्रयाग इव तीर्थेषु देवेषु भगवानिव ॥ नदीषु च यथा गङ्गा व्रतेष्वेतत्तथा व्रतम् ॥ ११६ ॥

है, जिसकी कथामात्रके श्रवणसे वांछित फल मिलता है ॥ ११५ ॥ जिस प्रकार तीर्थोंमें प्रयाग और देवताओंमें भगवान् और नदियोंमें गंगा है उसीप्रकार सब व्रतोंमें यह व्रत श्रेष्ठ है ॥ ११६

आपको धर्म्म,अर्थ,काम,मोक्षकी इच्छा होतो हे शक्र ! श्रद्धापूर्वक इस व्रतको करो ॥ ११७॥ इस व्रत-
के करने से महालक्ष्मीजी धन,धान्य,पृथ्वी,धर्म्म,कीर्ति, आयु,यश, शोभा,घोडे,हाथि,पुत्र ये सब देती हैं
॥ ११८ ॥ श्रीकृष्णजी राजा युधिष्ठिरसे कहते हैं, कि इसके बाद नारदजीके उपदेशसे इंद्रजीने इस

धर्म्मं चार्थं च कामं च मोक्षं च यदि वांछसि ॥ तर्हीदं च व्रतं शक्र कुरु श्रद्धासमन्वितः॥११७॥
धनं धान्यं धरां धर्म्मं कीर्तिमायुर्यशः श्रियम् ॥ तुरंगान्दन्तिनः पुत्रान्महालक्ष्मीः प्रयच्छति
॥ ११८ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ व्रतमिदमथ च क्रे नारदेनोपदिष्टं सुरपतिरपि यस्माद्वांछितार्थं स
लेभे ॥ त्वमपि कुरु तथेतद्धर्म्मसूनो यथा स्यादभिमतफलसिद्धिः पुत्रपौत्रादिवृद्धिः ॥ ११९ ॥

इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे महालक्ष्मीव्रतकथा समाप्ता ॥

व्रतको किया, और जिसके करनेसे इंद्रने वांछित फलको पाया । धर्मपुत्र! तुमभी इस व्रतको करो जि-
ससे अभीष्ट फलकी सिद्धि और पुत्रपौत्रादिकोंकी वृद्धि हो ॥ ११९ ॥

इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे महालक्ष्मीव्रतकथाटीका समाप्ता ॥

मुद्रक—
गोकुल प्रसाद द्वारा ।
गोकुल प्रेस, नं० ४६ बुलानाला बनारस सिटी ।

॥ इति ॥

भाषाटीकासहितमहालक्ष्मीव्रतकथा

॥ समाप्ता ॥

इति महालक्ष्मी व्रतकथा भा. टी.

❋ समाप्तम् ❋